मोदी ने पत्थर पर तो नहीं, समाज में लकीरें जरूर खींची!

अनिल जैन

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने हाल ही में अपनी जापान यात्रा के दौरान वहां प्रवासी भारतीयों के एक कार्यक्रम में आत्ममुग्ध अंदाज में कहा, ''मैं मक्खन पर नहीं, पत्थर पर लकीर खींचता हूँ।'' मोदी की पत्थर पर खींची गई लकीर का तो नहीं मालूम लेकिन दुनिया जानती है कि मोदी लकीर खींचने में माहिर हैं, बल्कि यूं कहें कि उनकी समूची राजनीति ही लकीरें खींचने पर आधारित है। उन्हें प्रधानमंत्री बने आठ साल पूरे हो चुके हैं। इन आठ सालों में उन्होंने और उनकी सरकार ने लकीरें खींचने के काम को ही प्राथमिकता के आधार पर किया है।

मोदी ने भारतीय समाज में धर्म, जाति, संप्रदाय, भाषा, क्षेत्र आदि के स्तर पर लकीरें खींची हैं। गुजरात में करीब साढ़े बारह साल तक मुख्यमंत्री रहते हुए भी उन्होंने यही काम किया था। इसीलिए तीन साल पहले अमेरिका की मशहूर पत्रिका 'द टाइम' ने अपने कवर पृष्ठ पर उन्हें 'डिवाइडर इन चीफ' का खिताब अता किया था। इसके अलावा भी अंतरराष्ट्रीय स्तर के कई प्रतिष्ठित संस्थानों और पत्र-पत्रिकाओं ने भी भारत के अंदरूनी हालात पर चिंता जताते हुए मोदी सरकार की विभाजनकारी नीतियों की आलोचना की है।

एक हाथ में विकास का झंडा, दूसरे हाथ में नफरत का एजेंडा और ओठों पर हिंदुत्ववादी राष्ट्रवाद का मंत्रज्इन्हीं के सहारे काम करते हुए मोदी सरकार अर्थव्यवस्था के और राष्ट्रीय सुरक्षा के मोर्चे पर तो बुरी तरह नाकाम साबित हो ही रही है, देश के अंदरुनी यानी सामाजिक हालात भी बेहद असामान्य बने हुए हैं। पिछले सात-आठ वर्षों के दौरान देश के भीतर चौतरफा बना जातीय और सांप्रदायिक नफरत, तनाव और हिंसा का समूचा परिदृश्य गृहयुद्ध जैसे हालात का आभास दे रहा है।

प्रधानमंत्री के रूप में मोदी ने सिर्फ देश में ही नहीं, बल्कि विदेश नीति की मोर्चे पर भी ऐसी लकीरें खींची हैं कि किसी भी पड़ोसी देश के साथ भारत के रिश्ते सामान्य नहीं हैं। पाकिस्तान जैसा सनातन बैरी ही नहीं बल्कि बांग्लादेश, नेपाल, भूटान, श्रीलंका, मालदीव, म्यांमार आदि देश भी पिछले आठ वर्षों के दौरान भारत से छिटक कर चीन के पाले में जा खड़े हुए हैं।

आठ साल पहले नरेंद्र मोदी ने प्रधानमंत्री बनने के ढाई महीने बाद जब 15 अगस्त 2014 को स्वाधीनता दिवस पर लाल किले से पहली बार देश को संबोधित किया था तो उनके भाषण को समूचे देश ने ही नहीं बल्कि दुनिया के दूसरे तमाम देशों ने भी बड़े गौर से सुना था। विकास और हिंदुत्ववादी राष्ट्रवाद की मिश्रित लहर पर सवार होकर सत्ता में आए नरेंद्र मोदी ने अपने उस भाषण में देश की आर्थिक और सामाजिक तस्वीर बदलने का इरादा जताते हुए देशवासियों और खासकर अपनी पार्टी तथा उसके सहमना संगठनों के कार्यकर्ताओं से अपील की थी कि अगले दस साल तक देश में सांप्रदायिक या जातीय तनाव के हालात पैदा न होने दें।

मोदी ने कहा था- ''जातिवाद, संप्रदायवाद, क्षेत्रवाद, सामाजिक या आर्थिक आधार पर लोगों में विभेद, यह सब ऐसे जहर हैं, जो हमारे आगे बढ़ने में बाधा डालते हैं। आइए, हम सब अपने मन में एक संकल्प लें कि अगले दस साल तक हम इस तरह की किसी गतिविधि में शामिल नहीं होंगे। हम आपस में लड़ने के बजाय गरीबी से, बेरोजगारी से, अशिक्षा से तथा तमाम सामाजिक बुराइयों से लड़ेंगे और एक ऐसा समाज बनाएंगे जो हर तरह के तनाव से मुक्त होगा। मैं अपील करता हूँ कि यह प्रयोग एक बार अवश्य किया जाए।''

इतना ही नहीं, मोदी ने अपने उस भाषण में पड़ोसी देश पाकिस्तान की ओर भी दोस्ती का हाथ बढ़ाने का संकेत दिया था। उन्होंने गरीबी, बेरोजगारी, अशिक्षा, आतंकवाद आदि को भारत और पाकिस्तान की समान समस्याएं बताते हुए आह्वान किया था कि दोनों देश आपस में लड़ने के बजाय कंधे से कंधा मिला कर इन समस्याओं से लड़ेंगे तो दोनों देशों की तस्वीर बदल जाएगी।

मोदी का यह भाषण उनकी स्थापित और बहुप्रचारित छवि के बिल्कुल विपरीत, सकारात्मकता और सदिच्छा से भरपूर माना गया था। देश-दुनिया में इस भाषण को व्यापक सराहना मिली थी, जो स्वाभाविक ही थी। राजनीतिक और कारोबारी जगत में भी यही माना गया था कि जब तक देश में सामाजिक-सांप्रदायिक तनाव या संघर्ष के हालात रहेंगे, तब तक कोई विदेशी निवेशक भारत में पूंजी निवेश नहीं करेगा और विकास संबंधी दूसरी गतिविधियां भी सुचारु रूप से नहीं चल सकती हैं, इस बात को जानते-समझते हुए ही मोदी ने यह आह्वान किया है।

प्रधानमंत्री के इस भाषण के बाद उम्मीद लगाई जा रही थी कि उनकी पार्टी तथा उसके उग्रपंथी सहमना संगठनों के लोग अपने और देश के सर्वोच्च नेता की ओर से हुए आह्वान का सम्मान करते हुए अपनी वाणी और व्यवहार में संयम बरतेंगे। लेकिन रत्तीभर भी ऐसा कुछ नहीं हुआ। प्रधानमंत्री की नसीहत को उनकी पार्टी के निचले स्तर के कार्यकर्ता तो दूर, केंद्र और राज्य सरकारों के मंत्रियों, सांसदों, विधायकों और पार्टी के प्रवक्ताओं-जिम्मेदार पदाधिकारियों ने भी तवज्जो नहीं दी। इन सबके मुंह से सामाजिक और सांप्रदायिक विभाजन पैदा करने वाले नए-नए बयानों के आने का सिलसिला न सिर्फ जारी रहा बल्कि वह नए-नए रूपों में और तेज हो गया।

इसे संयोग कहे या सुनियोजित साजिश कि प्रधानमंत्री के इसी भाषण के बाद देश में चारों तरफ से सांप्रदायिक और जातीय हिंसा की खबरें आने लगीं। कहीं गोरक्षा और धर्मांतरण के नाम पर, तो कहीं मंदिर-मस्जिद और आरक्षण के नाम पर और कहीं वंदे मातरम भारतमाता की जय और जय श्रीराम के नारे लगवाने को लेकर। इसी सिलसिले में कई जगह महात्मा गांधी और बाबा साहेब आंबेडकर की मूर्तियों को भी विकृत और अपमानित करने तथा कुछ जगहों पर नाथूराम गोडसे का मंदिर बनाने जैसी घटनाएं भी हुईं। हैरानी और अफसोस की बात तो यह है कि इन सारी घटनाओं का सिलसिला कोरोना जैसी भीषण महामारी के दौर में भी नहीं थमा और आज तो चरम पर है।

मोदी सरकार की आर्थिक नीतियों और कार्यक्रमों से देश की अर्थव्यवस्था का जो हाल हुआ है, उसकी तस्वीर बेहद डरावनी है। नोटबंदी और जीएसटी- ये मोदी सरकार के दो ऐसे विनाशकारी फैसले रहे हैं, जिनकी वजह से देश की अर्थव्यवस्था पूरी तरह चौपट हो चुकी है और जिनकी मार से किसान, मजदूर, कर्मचारी, छोटे और मझौले कारोबारी समेत समाज का तबका आज भी बुरी तरह कराह रहा है। इस हालत की तसदीक के लिए कहीं और जाने की जरूरत नहीं, क्योंकि खुद प्रधानमंत्री मोदी ही आए दिन अपनी पीठ थपथपाते हुए यह दावा करते रहते हैं कि उनकी सरकार देश की 80 फीसदी आबादी को हर महीने मुफ्त राशन दे रही है।

भारत सरकार भले ही दावा करे कि आर्थिक तरक्की के मामले में पूरी दुनिया में भारत का डंका बज रहा है, लेकिन हकीकत यह है कि वैश्विक आर्थिक मामलों के तमाम अध्ययन संस्थान भारत की आर्थिक स्थिति का शोकगीत गा रहे हैं। संयुक्त राष्ट्र की एजेंसी यूएनडीपी ने तमाम आंकड़ों के आधार पर बताया है कि भारत टिकाऊ विकास के मामले में दुनिया के 190 देशों में 117 वें स्थान पर है।

अमेरिका और जर्मनी की एजेंसियों ने जानकारी दी है कि ग्लोबल हंगर इंडेक्स में दुनिया के 116 देशों में भारत 101 वें स्थान पर है। संयुक्त राष्ट्र के प्रसन्नता सूचकांक में भारत की स्थिति में लगातार गिरावट दर्ज हो रही है। 'वर्ल्ड हैपिनेस रिपोर्ट' यानी 'वैश्विक प्रसन्नता सूचकांक-2022' में भारत को इस बार 136वां स्थान मिला है। 146 देशों में भारत का मुकाम दुनिया के तमाम विकसित और विकासशील देशों से ही नहीं बल्कि पाकिस्तान समेत सभी छोटे-छोटे पड़ोसी देशों और युद्धग्रस्त फिलिस्तीन से भी पीछे है।

देश में बेरोजगारी की भयावह स्थिति चरम पर है। सेंटर फॉर मोनिटरिंग ऑफ इंडियन इकॉनमी (सीएमआईई) की ताजा रिपोर्ट के मुताबिक मार्च 2022 में भारत का रोजगार बाजार और सिकुड़ गया। इस महीने रोजगार की तलाश से निराश होकर 14 लाख लोगों ने अपने को इस बाजार से अलग कर लिया। इस तरह भारत के श्रम बाजार में मौजूद लोगों की संख्या 39 करोड़ 60 लाख रह गई है। सीएमआईई ने अपनी रिपोर्ट में कहा है- 'ये आंकड़े भारत में आर्थिक विपदा का सबसे बड़ा संकेत हैं। लाखों लोगों ने रोजगार बाजार छोड़ दिया है। संभवत: इसका कारण यह है कि नौकरी पाने में नाकामी से वे बेहद हताश हो गए हैं।'

सीएमआईई ने बताया है कि बीते फरवरी में भारत में श्रम भागीदारी दर 39.9 फीसदी थी, जो मार्च में 39.6 प्रतिशत रह गई। किसी भी खुशहाल देश में यह दर 60 से 70 फीसदी के बीच होती है। यानी कामकाज में सक्षम आबादी के बीच कुल इतने लोग रोजगार बाजार में मौजूद रहते हैं। भारत की कहानी उलटी दिशा में है। इस तरह की रिपोर्टों के बीच पांच ट्रिलियन डॉलर की अर्थव्यवस्था और देश को आत्मनिर्भर बनाने के प्रधानमंत्री के दावे कितने हवाई हैं, आसानी से समझा जा सकता है।

कुछ समय पहले जारी हुई पेंशन सिस्टम की वैश्विक रेटिंग में भी दुनिया के 43 देशों में भारत का पेंशन सिस्टम 40 वें स्थान पर आया है। उम्रदराज होती आबादी के लिए पेंशन सिस्टम सबसे जरूरी होता है ताकि उसकी सामाजिक सुरक्षा सुनिश्चित हो सके। भारत इस पैमाने पर सबसे नीचे के चार देशों में शामिल है। पासपोर्ट रैंकिंग में भी भारत 84 वें स्थान से फिसल कर 90 वें स्थान पर पहुंच गया है। यह स्थिति भी देश की अर्थव्यवस्था के पूरी तरह खोखली हो जाने की गवाही देती है।

सरकार का कहना है कि कोरोना महामारी ने दुनिया भर की अर्थव्यवस्था को बुरी तरह प्रभावित किया है। लेकिन सच यह है कि भारत की अर्थव्यवस्था के ढहने का सिलसिला कोरोना महामारी के पहले नोटबंदी के साथ ही शुरू हो गया था, जिसे कोरोना महामारी और याराना पूंजीवाद पर आधारित सरकार की आर्थिक नीतियों ने तेज किया है और जिसके चलते देश आर्थिक रूप से खोखला हो रहा है। अंतरराष्ट्रीय बाजार में रुपए की गिरावट के नित-नए कीर्तिमान बन रहे हैं।

वैश्विक स्तर पर भारत की साख सिर्फ आर्थिक मामलों में ही नहीं गिर रही है, बल्कि लोकतंत्र, अभिव्यक्ति की आजादी, मानवाधिकार और मीडिया की आजादी में भी भारत की अंतरराष्ट्रीय रैंकिंग लगातार नीचे आ रही है।

कुल मिला कर इस समय देश का जो परिदृश्य बना हुआ है, वह आने वाले समय में हालात और ज्यादा संगीन होने के संकेत दे रहा है।

हे परमात्मा बनारस को बुरी नजर से दूर रखना : गालिब

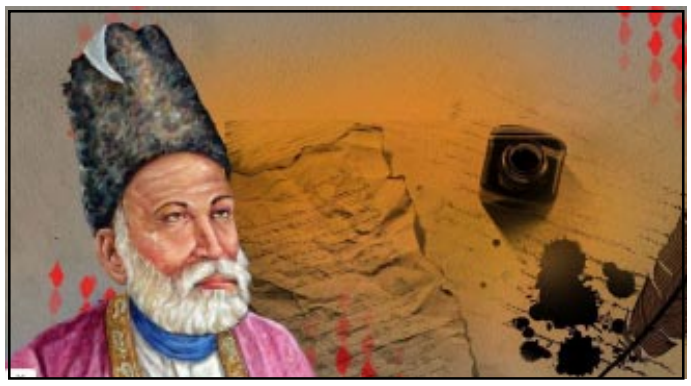

विजय शंकर सिंह

पहले मिर्जा गालिब की लिखी यह पंक्तियां पढ़ें, तआलल्लाह बनारस चश्म ए बद'दूर बहिश्त ए खुर्रम ओ फिरदौस ए मामूर, इबादतख़ान ए नाकूसियाँ अस्त ए हमाना काबा ए हिन्दोस्तां अस्त !

अब इसका हिंदी अनुवाद, हे परमात्मा, बनारस को बुरी नजर से दूर रखना, क्योंकि यह आनन्दमय स्वर्ग है। यह घंट ध्वनि करने वालों का उपासना स्थल है। यह हिन्दोस्तान का काबा है।

बनारस के बारे में गालिब ने यह पंक्ति, ' त'आलल्लाह बनारस चश्मे बद' दूर ' तब लिखी थी, जब वे दिल्ली से कलकत्ता, अपनी पेंशन के संबंध में, गवर्नर जनरल से फरियाद करने जा रहे थे और बनारस के सौंदर्य और मस्ती से अभिभूत हो वहीं रुक गए थे। वे दिल्ली से पहले, लखनऊ, अवध के नवाब के दरबार में कुछ आर्थिक कारणों से आए और फिर जब वहां उनका काम नहीं बना तो बांदा के नवाब के यहां एक संपर्क के द्वारा पहुंचे। बांदा से फिर वे इलाहाबाद होते हुए बनारस पहुंचे। बनारस रुकने की उनकी कोई योजना नहीं थी, पर बनारस उन्हें इतना पसंद आ गया कि वे वहां तीन हफ्ते तक रुके रहे और खूब घूमा।

मिर्ज़ा ग़ालिब की बनारस-यात्रा मशहूर है। उन्होंने बनारस में जो कुछ भी देखा था उसे अपने एक मसनवी 'चिराग-ए-दैर' में लिखा, यह मसनवी उन्होंने फ़ारसी में लिखी थी। बनारस पहुंचकर जब ग़ालिब ने वहां तीन चार हफ़्ते गुज़ारे और जब शहर से खूब परिचित हो गए तब उन्होंने अपने दोस्त मौलवी मोहम्मद अली खां को एक लंबा पत्र लिखा। इस पत्र में बनारस के संबंध में उनकी मनःस्थितियों का बेहद मार्मिक चित्रण मिलता है। वे लिखते हैं-

जब मैं बनारस में दाखिल हुआ, उस दिन पूरब की तरफ़ से जान बख़्शने वाली, जन्नत की- सी हवा चली, जिसने मेरे बदन को तवानाई अता की और दिल में एक रूह फूंक दी। उस हवा के करिश्माई असर ने मेरे जिस्म को फ़तह के झण्डे की तरह बुलंद कर दिया। ठण्डी हवा की लहरों ने मेरे बदन की कमजोरी दूर कर दी।

यह सुबहे बनारस का जिक्र है। और जिक्र का अंदाज भी किसी और सुखनवर के अंदाज से नहीं बल्कि गालिब की अनूठी अंदाज ए बयानी से है।

ऐसा नहीं कि बनारस पर फ़ारसी भाषा में सबसे पहले ग़ालिब ने ही लिखा हो। हक़ीक़त यह है कि फ़ारसी भाषा में बनारस के विषय में लिखने की परंपरा सदियों से चली आ रही है। ग़ालिब ने अपनी मसनवी 'चिराग-ए-दैर' लिखकर उसी परंपरा का विस्तार किया। बनारस में कुछ दिन गुज़ारने और शहर के विभिन्न इलाक़ों की शैर करने के बाद उन्होंने जो अनुभव किया उसके बारे में लिखते हैं-

बनारस शहर के क्या कहने! अगर मैं इसे दुनिया के दिल का नुक़्ता (बिंदु) कहूं तो दुरुस्त है। इसकी आबादी और इसके अतराफ़ के क्या कहने! अगर हरियाली और फ़ूलों के ज़ोर की वजह से मैं इसे ज़मीन पर जन्नत कहूं तो बजा है। इसकी हवा मुर्दों के बदन में रूह फूंक देती है। इसकी ख़ाक के ज़र्रे (कण) मुसाफ़िरों के तलवों से कांटे खींच निकालते हैं। अगर दरिया-ए-गंगा इसके क़दमों पर अपनी पेशानी न मलता तो वह हमारी नज़रों में मोहतरम (प्रतिष्ठित) न होता, और अगर सूरज इसके दरो-दीवार के ऊपर से न गुज़रता तो वह इतना रौशन और ताबनाक न होता।

बनारस के घाट, उत्तरवाहिनी गंगा, मंदिरों के शिखर, घंटे घड़ियालों की आवाजें, शंख ध्वनि ने उन्हें इतना मंत्रमुग्ध कर दिया कि उन्होंने यहां तक लिख दिया कि वे बनारस में ही बस जाना चाहते हैं। गालिब को अपने फक्कड़पन और बनारस की मस्ती में एक स्वाभाविक सामंजस्य दिखा। फारसी में उस मसनवी चराग ए दैर, जिसमें बनारस की खूबसूरती, मस्ती का अद्भुत वर्णन है। यह अंश उसी लंबी नज़्म का एक अंश है। आज बनारस को जिस उन्माद की बुरी नजर से बचाने का वक्त आ गया है, उसमें गालिब की यह लगभग डेढ़ सौ साल पहले की गई दुआ आज प्रासंगिक हो उठती है।